

विरासत में मिली श्रेष्ठता और संघर्ष से अर्जित योग्यता



आजकल

अक्सर देवता को मिलता है कि पढ़ा-लिखा व्यक्ति स्वयं को इस प्रकार प्रस्तुत करता है, मानो वह सर्वश्रेष्ठ हो और उसके सामने बाकी सभी लोग तुच्छ हों। वह स्वयं को हर दृष्टि से योग्य और दूसरों को अपने से कमतर समझने लगता है। जबकि कई बार उसकी तमकथित श्रेष्ठता का आधार केवल वह पढ़, प्रशिक्षण या विरासत होती है, जो उसे सहज ही प्राप्त हो गई होती है। पढ़-लिखकर योग्य बन जाना एक बात है, लेकिन उस योग्यता को अनुभव, संघर्ष, त्याग और तपस्या से परिष्कृत करना बिल्कुल दूसरी बात है। किसी भी उर्ध्वचालित पहुँचने के लिए किन्ना संघर्ष करना पड़ता है, किन्ना त्याग करने पड़ते हैं और किन्ना कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है, इसका वास्तविक बोध उसी व्यक्ति को होता है, जिसने उन परिस्थितियों को स्वयं जिता हो। जिसे वादशाह बनी-बनाई विरासत में मिल जाती है, वह अक्सर उस संघर्ष से अनभिज्ञ रह जाता है, जिसके बल पर उसके पूर्वज उस गद्दी तक पहुँचे होते हैं। यदि वह स्वयं उस संघर्ष से गुजरता होता, तो शायद उस गद्दी के पीछे छिपे पड़थे, त्याग, तपस्या और बलिदानों को भी समझ पाता। उसे यह भी एहसास होता कि उस प्रशिक्षण को बनाए रखने के लिए किन्ना जिम्मेदारियाँ निभानी पड़ती हैं और किन्ना निर्णयों का पालन करना पड़ता है। इससे समझने के लिए एक किसान के जीवन को देखिए। एक किसान अपनी फसल को दुर्दशा देखकर भी अपने बैलों पर डंडा चलाते से पहले स्वयं कष्ट सहना स्वीकार कर लेता है। वह जानता है कि उसके बैल उसके कुषि-कर्म के सहयोगी हैं। खेतों में अन्न उगाने से लेकर उसे घर तक पहुँचाने की प्रक्रिया में उनका भी अपना योगदान है। इसलिए किसान अपने बैलों के प्रति केवल स्वामी होने का भाव नहीं रखता, बल्कि उनके श्रम और सहयोग का सम्मान भी करता है। किसान को यह अच्छी तरह पता होता है कि खेत को उपजाऊ बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयास करना पड़ता है। केवल खेत का मालिक हो जाना पर्याप्त नहीं है; उसकी उर्वरता बनाए रखने के लिए पर्याप्त बहाना पड़ता है। फसल उगाने से पहले मिट्टी तैयार करनी पड़ती है, बीज बोने पड़ते हैं, सिंचाई करनी पड़ती है और मौसम की मार भी सहनी पड़ती है। वह जानता है कि पानी से अन्न प्राप्त करने के लिए श्रम, धैर्य और समर्पण आवश्यक हैं। यही कारण है कि वास्तविक परिश्रम करने वाला किसान अपनी मेहनत पर अहंकार नहीं करता। उसे पता होता है कि उसकी सफलता में प्रकृति, पशुओं और उन तमाम परिस्थितियों का योगदान है, जिनके बीच उसने खेती की है। उसके

लिए खेत केवल संपत्ति नहीं, बल्कि उसकी मेहनत, अनुभव और जीवन-संघर्ष का प्रतिफल है। यही इसी प्रकार, किसी भी पढ़, प्रशिक्षण या संस्थान की सफलता के पीछे अनेक लोगों का परिश्रम, त्याग और समर्पण छिपा होता है। जो व्यक्ति इस योगदान को समझता है, वह अपने पद का अहंकार नहीं करता, बल्कि अपने सहयोगियों के प्रति कुतूहल रहता है। कोई भी परिवार, संस्थान, गाँव, मोहल्ला या राजनीतिक दल तब तक सशक्त नहीं हो सकता, जब तक उसमें योग्य व्यक्तियों के श्रम, विचारों और विवेक का सम्मान न हो। जिस दिन ऐसे स्थानों पर चाटुकारिता को योग्यता से अधिक महत्व दिया जाने लगता है और चाटुकारों को ही आगे बढ़ना जाने लगता है, उसी दिन पतन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। ऐसे वातावरण में संस्थान के प्रति समर्पित व्यक्ति भी दौरे पर खड़ा हो जाता है। या तो वह व्यवस्था के साथ समझौता करके भ्रष्ट प्रवृत्तियों को अपना लेता है, या फिर अपने विवेक और आत्मसम्मान को बचाने के लिए उस संस्थान से दूरी बना लेता है। जो कर्मचारी अपने अस्मिता, चरित्र और संस्कारों से समझौता नहीं करना चाहता, वह गलत व्यवस्था का हिस्सा बनने के बजाय उससे अलग होना उचित समझता है। यही किसी भी परिवार या संस्थान के लिए विचारणीय स्थिति है कि कहीं उसकी कार्यभाराली योग्य और ईमानदार लोगों को हतोत्साहित तो नहीं कर रही है। क्योंकि जब विवेकशील लोग किन्ना कर दिए जाते हैं और चाटुकारिता को प्रश्रय मिलने लगता है, तब धीरे-धीरे संस्थान की वास्तविक क्षमता और विश्वसनीयता दोनों प्रभावित होने लगती हैं। किसी भी संस्थान, परिवार या समूह का प्रभान चाहे उपर के किसी भी पड़ने पर हो, उसे अपनी समझदारी, निर्णय क्षमता और दूरदर्शिता को निरंतर विकसित करते रहना चाहिए। नेतृत्व का अर्थ केवल सर्वोच्च पद पर बैठना नहीं है, बल्कि उस पद के अनुरूप विवेक, धैर्य और जिम्मेदारी का परिचय देना भी है। एक अच्छे नेतृत्वकर्ता को अपनी आँखें और कान हमेशा खुले रखने चाहिए। उसे लोगों की बातें सुनी चाहिए, उनके सुझावों पर विचार करना चाहिए और परिस्थितियों का निष्पक्ष आकलन करना चाहिए। लेकिन अतिम निर्णय केवल किसी की प्रशंसा, दबाव या चाटुकारिता के आधार पर नहीं, बल्कि अपनी सुझाव, विवेक और अनुभव के आधार पर लेना चाहिए। क्योंकि पढ़, विरासत में मिल सकता है, लेकिन नेतृत्व की योग्यता अर्जित करनी पड़ती है। प्रशिक्षण प्राप्त की जा सकती है, लेकिन सम्मान अपने आचरण से कमाना पड़ता है। और किसी गद्दी पर बैठ जाना आसान हो सकता है, लेकिन उस गद्दी की गरिमा बनाए रखना ही वास्तविक नेतृत्व की पहचान है।

गुडिया तिवारी
गोपालगंज सावन बिहार

शिरिर नदी के किनारे बैठ था। आज उसका मन हमेशा की तरह बहुत विचलित था। थोड़ी देर बाद उसे एक संत नदी की ओर आते हुए दिखाई दिया। वे शिरिर के पास आ कर बैठे।

शिरिर संत को बोले
अचरज भरी निगाहों से देखना। संत समझ गए कि यह बालक कुछ परेशान है। संत ने शिरिर से पूछा - बालक! तुम कुछ चिंतित दिखते रह रहे हो? शिरिर नमस्तक होकर बोले - 'हैं संत शिरोगमिण! हैं, सचमुच मैं बहुत चिंतित हूँ। मुझे अपने कुछ प्रश्नों के उत्तर नहीं मिल रहे हैं।

संत शिरिर के सर पर हथ रखते हुए बोले - 'वस! इस संसार में ऐसा कोई प्रश्न नहीं है, जिसका उत्तर न हो। प्रश्नों के साथ ही उत्तर को व्युत्पन्न होते हैं। वस, हमें प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने आना चाहिए। आखिर प्रश्न क्या है तुमरा?'

शिरिर ने संत के समक्ष अपनी बात रखी - 'मैं कुछ ऐसा काम करना चाहता हूँ, जो कुछ अलग हो।

'क्या अलग सा काम करना चाहते हो? संत शिरिर की ओर हाथ बढ़ाते हुए बोले।

शिरिर के लगभग - 'नमस्कार प्रारंभ होने वाली है। ब्रह्मा-भक्ति के इस अवसर पर देवी-देवताओं को बेजुबान पशुओं की बलि चढ़ाई जायेगी। इसे मैं रोकना चाहता हूँ। इसके लिए मुझे आपका मार्गदर्शन चाहिए।

हाथ जोड़े हुए शिरिर को देख संत ने कहा - 'वस! इतनी सी बात! इसके लिए तुम जो कुछ भी करना चाहते हो, स्वयं ही शुरुआत करो।

'तो मैं क्या करूँ श्री! बताइए ना। शिरिर के मुखमंडल पर प्रसन्नता की लहरीयाँ सी दिखाई दीं।

संत बोले - 'पुत्र! स्वर्गवर्ष के प्रथम दिवस से ही पौष लगाना प्रारंभ कर दो। फिर क्या होगा संतश्रेष्ठ? शिरिर के माथे पर सिकनभरा प्रश्न उड़ा।

'पहले मेरी बातें सुनी बालक। संत ने शिरिर को बीच में ही टोकते हुए कहा - 'एक तख्ती में - 'मनत का पौष। लिख कर पौष पर बाँध दो। फिर जो भी कार्य तुम करना चाहते हो वह पूर्ण हो जायेगा। संत वहाँ से प्रस्थान कर गये दूसरे दिन शिरिर ने अपने घर के सामने एक पौषा लगाया और संत के कहे अनुसार पौषा का देखाभाल करने लगा। गाँव के एक व्यक्ति ने शिरिर से पूछा - 'अरे शिरिर! ये क्या लिखे हो पौष पर। मनत का पौषा शिरिर मुस्कुराते हुए सही विमर्शपूर्ण बोले - 'जी काका जी। मैंने देवी में से जो मनत मँगी थी, वो पूर्ण हुई। तो उसकी याद में मैंने एक पौषा लगाया है, और लिखा है - मनत का पौष।

'अरे...! देवी में से मनत मँगने पर तो हम बकरे की बलि देते हैं न और ये जरूरी भी तो है। तुमरा यह सब क्या है?'

काका जी के पेट में शिरिर की बात कुछ पच नहीं रही थी। उसने शिरिर की पौष की मनत वाली बात एक दूसरे व्यक्ति से कही। बात दूसरे से तीसरे व्यक्ति के पास चली गयी। इस तरह बात पूरे गाँव में जंगल की आग की तरह फैल गयी। दो-तीन दिन बाद गाँव वाले शिरिर के घर जा पहुँचे। एक दिन सुबह के समय शिरिर पौष पर पानी डाल रहा था कि पीछे शौएल सुन रुक गया; और एक कि आप सभी यहाँ कैसे हूँ हम में से एक बुजुर्ग बोले। 'बेटा शिरिर हम सभी बेवकूफ हैं क्या, जो तेरे झूठे में आ

मन्त्र के पौधे

जायी। - 'कैसी बातें कर रहे हैं दादा जी आप? मैं कुछ समझा नहीं। शिरिर ने कहा - 'अरे बेटा, हम हर साल देवी माँ को बकरे की बलि देकर मूर्ते पुरी करते हैं; और तुम इसे बदलना चाहते हो? पता नहीं, आजकल के तुम युवा हमारे रीतिरिवाजों को क्यों बदलना चाहते हो? और ऐसा करना देवी माँ का अपमान नहीं है? बुजुर्ग का स्वर तीखा हो चुका था।

शिरिर ने बड़े ही कोमल स्वर में जवाब दिया। 'माफ कीजिएगा दादा जी। मैंने बहुत न तो किसी को बनाई है; और न तो किसी को बताना चाहता हूँ। वस मुझे अपने फायदे के लिए किसी बेजुबान की जान लेना अच्छा नहीं लगता। अपनी मर्त के लिए एक पौषा लगा रहा हूँ।

काका जी बोले - 'क्या सच मैं एक पौषे लगाने से तुमहरी मनोकामना पूरी हो गई?'

'जी काका जी। संसार में हर जीव देवी माँ की ही संतान है, तो भला वह अपने ही बच्चों की बलि कैसे लेगी। गाँव के लोगों पर शिरिर की बातों का धीरे-धीरे असर पड़ने लगा। तभी एक व्यक्ति मूँह बनाते हुए बोले - 'अरे भाई, मैं हर साल मनत मँगने से पहले एक बकरे की बलि देता हूँ। हर साल दस-पच्चीस हजार खर्च करता हूँ; और तुम एक पौषे से ही अपनी मर्त पूरी होने की बात कर रहे हो। तुम एक बेवकूफ हो, या फिर हमें बेवकूफ बना रहे हो। थोड़ी देर बाद बुजुर्ग व्यक्ति बड़े क्रोधित स्वर में बोले - 'उक! के उछाड़। हम भी देखते हैं। यदि तुमहरी बातें सच नहीं हों तो इस पौषे को उखाड़ कर फेंकें।

'उक! के उछाड़। और हँ दादा जी सिरफ़ मेरे पौषे उखाड़ कर फेंकें।

'शिरिर ने कहा। दादा जी मुझे पेंडते हुए वहाँ से चले गए। गाँव वाले भी प्रस्थान कर गये। कुछ लोग तो अपनी अंधविश्वास व दैव्यात्मिकी बातों पर अडिग रहे। कुछ लोगों को शिरिर की बातें भी गयीं; उन्होंने भी एक-दूसरे पौषा लगाना प्रारंभ किया। कुछ दिन बाद उस बुजुर्ग व्यक्ति ने सच्चे मन से माता के दरबार में अपनी इच्छा रखी। उनको बरसी को इच्छा आने पूर्ण हुई। वे फूलों नहीं समा रहे थे। गाँव में घोषणा कर दी कि देव नववर्ष से हम सब व्रतन रहे हैं कि कभी किसी ने बुजुर्ग पशु-पक्षी की जान नहीं ली। उनके व्रतन पर - 'मनत का पौषा - लगाएँ। और उसकी रक्षा करेंगे।

इस तरह देवी माँ के सामने सभी नमस्तक होकर काम मँगने लगे। और शिरिर को बुजुर्ग व्यक्ति बड़े धर्म के साथ कहने लगे कि अगर शिरिर न होता, तो हमारा पाप बढ़ता ही जाता। हमें क्या है बेटा तुम पर। पल्लेकामन करने से पहले ही तुमरा हमारी अर्द्ध खोल दी। आज शिरिर बहुत खुश था। वह मन ही मन संत के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त कर रहा था। गाँव में सर्वत्र हो-पर पड़-पड़ों आंगड़ाई लेते हुए हवा के साथ झूम रहे थे।

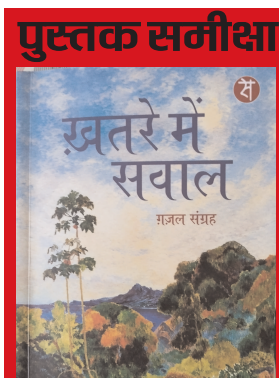
प्रिया देवांगन प्रिय राजिम

जिला - गतिधाम

छत्तीसगढ़

ख़तरे में सवाल-सूखना अनुभूतियों की अभिव्यक्ति

शायरी के मुसलसल बहव का नाम है प्रेम साहित्य। वह सातवें गुल संग्रह - 'खतरे में सवाल' की ताज़ातज़ीब गुज़लों के साथ अपने चाहने वालों के रुबकू ख़ुश है। प्रेम साहित्य की शायरी कोई धमाकाधम, सस्मरणीय खेज या चौकाने वाली शायरी नहीं है। यही वह तो धीमी-धीमी आँच पर फकते उस अर्क जैसी है जिसने ज़्यादा कलरफुल या डस्टफुल न होत हुए भी दिलो-दिमाग पर अपना स्थाई अमर छेड़ना होता है और कई जेहनी विकृतियों को जड़ से उखाड़ना होता है। प्रेम साहित्य परिस्थितियों, घटनाओं, समस्याओं को किसी प्रतिभाशाली विद्यार्थी की भाँति उलट-पलट कर लफ्ज़ों की जादूरी और अलग - अलग जाविये से देखने-परखने और रस करने की सहाय्यक रहते हैं। इसी प्रभाव के चलते जहाँ परिवार, समाज, सत्ता अक्सर सवालालों के घेरे में रहते हैं लेकिन शायर ने इन गुज़लों के माध्यम से सवालालों पर मंडा रहे खतरे को ही कटघरे में खड़ा कर दिया है। इस शायरी में गुंजर चुके वचन कविों के हैं। माँ की लोरियाँ हैं। देशों में फकड़े गुब्बारे हैं। आज संगी-साथियों के



साथ गुज़ारे पलों के नज़ारे हैं। बागानी देवों - लोरियाँ जितनी भी ग़ारक माँ सुलाती हैं हमें रहे खिलवाड़, उसके दोहन और विनाश से - चिंतित हैं और बदले में पंथ स्वरूप कुदरत जो कहर डा रही है उससे भी दहशतज्ज

याद है उन लोरियों के गीत सारे आज तक। प्रेम की शायरी में रोमान्सीयत भी मौजूद है। रोमान्सीयत का रंग जिन्दगी में कभी पीकना नहीं पड़ता। इस रंग में तो साग साग जहाँ ही रंग हुआ दिखाई देता है। इस रंग के रसाई भाव इस शायरी में दिखाई देते हैं। उदाहरण प्रस्तुत है - 'किताबें पढ़ रहा हूँ सिरफ़ अब उनके खुयालों को/ कि तख्ती पोंछ दी मैंने ज़माने के सवालालों की/ हमारे पास अब उनकी अमागत की दो ही चीजें हैं, दस्तक की गंध है चूँक है। दूसरी खुशबू बालों की। - शायर आदमी द्वारा कुदरत के साथ किये जा

है। इस सब पर सियारी लोगों द्वारा की जा रही सियासत से भी वह खुन्न नज़र आता है। तभी तो वह कह उठता है -

'लपटा है लोग कितने ही मवेशी बह गए/ भाल पर लेकिन सियासत के शिकन न आ रही/ सोचिए कुदरत हमें जो पालती है और दिन/आज हम पर ही वो क्यों इतना कहकर है ख रही।

शायर वक्त के खेल को बाखूबी समझता है। वह भूत, वर्तमान और भविष्य के सिलसिले को ही बाखूबी जानता है। वह जीवन की क्षण भंगुरता, जीवन के आवागमन के दर्शन को कुछ यूँ हमारे समक्ष रखता हुआ सियासत पर भी कटाक्ष करने से नहीं चूकता है -

'मिलेगा कौन बैठा कौन जाने कल की टहनी पर/ है सितना चहचहाना, चहचहा इस पल की टहनी पर/ सियासत के तो जंगल में, पड़ि आते-जाते हैं/ कभी इस दल की टहनी पर, कभी उस दल की टहनी पर।

शायर प्रेम साहित्य बिना रुक इस बदलती दुनिया के रंग - रंग और रसों से खूब नहीं दिखाई देता लेकिन वह पूरी तरह निराशावादी अथवा नकारात्मक भी नहीं

है। हर तरफ़ नुआई और आनंदता देख कर भी उसे उम्मादों की किरण दिखाई देती है। शायर की यह मनोभावना निम्न सारों में झलकती नज़र आती है। दीवारें बाहर तो हैं अंदर भी हैं/ दीवारों की जट में अब तो घर भी हैं/ बदतर ही ना है सब कुछ इस दुनिया में/ दुनिया में कुछ बातें अब बेहतर भी हैं।

शायर अपनी संस्कृति और सियासत से जुड़ कर गुस्सा और सर्वश्रवण बलिकान को नहीं भूलता। वह आदमी को इससे प्रेरणा देने का आह्वान करता है। इस भावपूर्ण शेरों में शायर कह रहा है -

'सबके बच्चे घर में हैं, जबकि साहित्य/ छोटें साहित्यजदे हैं दीवारों में। इस प्रकार इस पुस्तक - 'खतरे में सवाल' में प्रेम साहित्य ने जहाँ जीवन की सूख अनुभूतियों को चित्रित किया है। वहीं मनुष्य की मानसिक उलझनों और समाजिक परिवर्तन का जो आप जगह पर प्रभाव पड़ रहा है और साथ ही साथ समाज और राजनीति में व्याप्त नुआइयों, कुरीतियों, विडम्बनाओं, अमानितियों, विमर्शितियों को आड़े हथों लिया है और लेना भी चाहिए। शायर अपनी शायरी के ज़रिए पाठकों को

यह जीवन संदेश भी देता है -

'आदमी की जिंदगी इससे ज़ियादा कुछ नहीं/ चढ़ना सूखन की तरह, सूख सा खल जाने का है।

इस प्रकार घुप अंधेरे में भी रोशनी, नकारात्मकता में भी सकारात्मक, निराशा में भी आशा का गहरे अर्थों में पैगाम देने वाली शायरी की यह पुस्तक पठनीय, विचारणीय एवं संसाधनीय है।

'खतरे में सवाल' - गम्भीरता और गहराई से पढ़ने का आह्वान भी करती है। निरसिंह यह संस्कृत शायर प्रेम साहित्य की काव्य यात्रा का नया मौल पत्थर भी कहा जा सकता है। समीक्षक

डॉ. धर्मपाल साहित्य होशियारपुर पंजाब (9876156964)

पुस्तक - 'खतरे में सवाल' (गज़ल संग्रह)

शायर - प्रेम साहित्य प्रकाशक - समुद्र प्रकाशन, दिल्ली

मूल्य - 250/- पृष्ठ - 108

नारायण साहित्य शाला उत्तर प्रदेश मंच पर

काव्य सृष्टि का सफल आयोजन

संस्थापक श्री रामजन त्रिपाठी के मुख्य आतिथ्य में कल दिनांक 11-10-26 को काव्यगोष्ठी का आयोजन पारम्परिक तरीके से किया गया। नवरात्रि के प्रारंभ के दिन पंडित श्री मनोहर दाय वैष्णव रायगढ़ छत्तीसगढ़ ने माँ शैलपुत्री का आवाहन शीघ्र पधारी गिरिसुता, विजय विनायक संग स्वागत खलिर हम खड़े, मानस भरे उमांग। इस भाव से किया। श्री रामगोपाल निर्मल कर शिवनी ने घट स्थापना पर माँ के श्रितिल रूप का वर्णन प्रथम दिवस नवरात्र का, शैलपुत्री अवतार।

वृषभ सवारी माँ करं कर सोहल श्रृंगार।

इसी कड़ी में श्री ओमप्रकाश खरे जौनपुर ने समाज में सुख-समृद्धि की कामना इन शब्दों से

करी। सुख-समृद्धि आरोग्य का, माँ देती वरदान। शैलपुत्री माता करे, जन-जन को काव्यगोष्ठी। नागदा के पंडित श्री सुंदरलाल जोशी ने माता के रूपों की आराधना करते हुए अपनी भी अर्जी तम हरना माँ शारदे, तेरे रूप अनेक। ब्रह्म चारिणी ज्ञान दे, खोए नहीं वियेक। माता के दरबार में रखी। जगदंबा की आराधना हो और नारी शक्ति न हो ऐसा तो हो नहीं सकता, श्रीमती वीनू शर्मा ने माता के आशीर्वाद की कामना में अर्चना के पुष्प इस प्रकार रखें। शारदा नवरात्र जगत को सदा तुल्य लेने को आशीष द्वार हर कोई आता। संस्थाके सचिव श्री रामेश्वर प्रसाद बनारसी ने कुमांडा और स्कंदमाता के

प्रति अपने श्रद्धा-सुमन में कहारुष्टि कुमांडा सिरजन हर रूप चौथा यह जग में सार। स्कंदमाता की कृपा अपार,

पौवा रूप सुखी - संसार। माता के दरबार में रखी। जगदंबा की आराधना हो संस्थापक श्री रामजन जी त्रिपाठी ने अपने कथन में नारी के विभिन्न रूपों के साथ

पुरुष के गुणों को साधते हुए प्रकृति और पुरुष दोनों के महत्व को - भाव्य भंगिनी अनुजा तनुज दरस परस हिय रूप सुपर। सांसारिक वैभव में बिखर प्रकृति - पुरुष सिंह रूप बतलाते हुए माँ अम्बे की आराधना अंत में नारायण साहित्य शाला उत्तर प्रदेश पटल के अधिष्ठाक श्री दुयंत कुमार व्यास ने सभी साहित्यकार साथियों का धन्यवाद ज्ञापन किया।



देवी-आराधना

हमारे समय में गर्मियों के मौसम के कश्मीर के खीर भवानी/तुलामुला मंदिर में साधु-संत और बाबाजी खुब हुआ करते थे। एक तो मध्य भारत की गर्मी से बचते थे और दूसरा देवी अर्चना में अपना ध्यान भी लगाते थे। ये बातें पचास के दशक में भी होती थी। एक बार जेठप्रभुजी के मेले के अवसर पर मैं इस मंदिर में जगदंबा माता के दर्शन के लिए गया हुआ था। आरती के बाद एक बाबाजी से भेंट दूँगी। आशीर्वाद के तौर पर उन्होंने मुझे एक श्लोक पढ़कर सुनाया और आग्रह किया कि भविष्य में मैं सदैव दो-पक्षियों वाले इस सूत्र का

नियमित रूप से पाठ किया करूँ। देवी जगदंबा माता की कृपा सदैव बनी रहेगी। उन्होंने यह श्लोक मुझे लिख कर भी दिया। मैं कई वर्षों तक इस श्लोक का पाठ करता रहा। इस श्लोक का मूल अर्थ इस प्रकार है -

सर्वमंगल मांग्यते शिवे सर्वार्थ साधिके। शरण्ये त्वंके गौरी नारायणी नमोऽस्तुते। सर्वमंगल मांग्यते - सभी मंगलों में मंगल शिवे - कल्याणकारी सर्वार्थ साधिके - सभी मनोरथों को सिद्ध करने वाली

शरण्ये - शरणार्थक वस्तुला, शरण करने योग्य त्रयम्बके - तीन नेत्रों वाली गौरी - शिव पत्नी नारायणी - विष्णु की पत्नी नमः अस्तु ते = तुम्हें नमस्कार है। (सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली, मंगलमयी कल्याण करने वाली, सब के मनोरथ को पूरा करने वाली, तुम्हीं शरण ग्रहण करने योग्य हो। तीन नेत्रों वाली यानी भूत भविष्य वर्तमान को प्रत्यक्ष देखने वाली हो, तुम्हीं शिव पत्नी, तुम्हीं नारायण पत्नी अर्थात् भगवान के सभी स्वरूपों के साथ तुम्हीं जुड़ी हो, तुम को नमस्कार है।)

डॉ. शिवन कृष्ण रेणु